जन्म शताब्दी पुस्तकमाला- ८०

देव पूजन का मर्म समझें

(प्रवचन)

देवपूजन का मर्म समझें

गायत्री मंत्र हमारे साथ-साथ—

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

देवियो, भाइयो! देवता का अनुग्रह पाने के लिए देवता का पूजन करना आवश्यक है। इसके बिना देवता प्रसन्न नहीं हो सकते, देवता का अनुग्रह नहीं मिल सकता, देवता का प्यार नहीं मिल सकता, देवता की कृपा नहीं हो सकती। देवता का पूजन करने के लिए जो प्रक्रिया अपनाई जाती है, अगर हम उसे बताने लगें, तो बात लंबी हो जाएगी। इसलिए पंचोपचारपरक देवपूजन की व्याख्या तो मैं यहाँ नहीं कर सकता। लेकिन इस पंचोपचार की व्याख्या मैंने हजारों बार की है, जिंदगी भर की है और सारी जिंदगी भर करूँगा, ताकि आपकी देवात्मा पर आस्था बनी रहे।

अपना निर्धारण स्वयं करें

अगर आप सच्चे अध्यात्मवादी हैं तो आप या तो हिंदू हो जाइए या मुसलमान हो जाइए। नहीं साहब! हम हिंदू भी नहीं हो सकते और मुसलमान भी नहीं हो सकते, तो फिर आप मर जाइए या जिंदा हो जाइए। नहीं साहब! हम मरना भी नहीं चाहते और जिंदा भी नहीं होना चाहते हैं। तो फिर क्या होना चाहते हैं? अच्छा तो वही रहिए जो आप इस समय हैं। इस समय न आप मरे हुए हैं और न जिंदा हैं। न आप भौतिकवादी हैं और न अध्यात्मवादी हैं। अगर आप भौतिकवादी हैं तो कम्यूनिस्ट हो जाइए। यह आपकी मरजी है कि आप भगवान का नाम नहीं लेंगे और आप अगर अध्यात्मवादी हैं तो सच्चे मायने में अध्यात्मवादी हो जाइए, जैसा कि हम आपको सिखाते हैं। जिस तरह हम आपको सिखाते हैं, उस तरह का अध्यात्मवाद भी आपको मंजूर नहीं और उस तरह का कम्यूनिज्म भी मंजूर नहीं। अत:

कम्यूनिज्म भी आपके लिए उतना ही मुश्किल–कठिन है, जितना कि अध्यात्म।

मित्रो! कम्यूनिज्म भी यह सिखाता है कि आप मशक्कत कीजिए और अपनी योग्यता बढ़ाइए। इससे कम में कुछ नहीं मिल सकता। आप वह भी नहीं करना चाहते। नहीं साहब, हमको तो ऐसे दिलवाइए, जादू से, चमत्कार से दिलवाइए। कम्यूनिस्ट जी! हाँ साहब! बताइए आपको चमत्कार पर विश्वास है? मशक्कत पर विश्वास है? आपको मशक्कत के लिए कहा जाएगा तो आपका अध्यात्म गायब हो जाएगा, फिर आप क्या करेंगे? साईं बाबा की पूजा करेंगे, मनसा देवी की पूजा करेंगे। क्या करेंगे इनकी पूजा करके? कम्यूनिज्म बहुत कष्टसाध्य है, उसे आप बरदाश्त नहीं कर सकते। प्रत्येक क्रिया के लिए आपको उचित मूल्य चुकाना पड़ेगा और अपनी क्षमता का विकास करना पड़ेगा। आपको वह भी मंजूर नहीं है और यह भी मंजूर नहीं है, फिर आप क्या हैं? मैं नहीं जानता कि आप क्या हैं?

ऐसी स्थिति में यही कहा जा सकता है कि न आप हिंदू हैं, न आप मुसलमान हैं, न आप पशु हैं, न आप पक्षी हैं, न आप भौतिकवादी हैं और न आप अध्यात्मवादी हैं। भौतिकवादी आपकी इच्छाएँ हैं और अध्यात्मवादी आपकी क्रियाएँ हैं। आप अध्यात्मवादी इच्छाएँ कीजिए और भौतिकवादी क्रियाएँ कीजिए। नहीं साहब! हम भौतिकवादी इच्छाएँ रखेंगे और अध्यात्मवादी क्रियाएँ करेंगे। बेटे! यह कैसे हो सकता है? ऐसा नहीं हो सकता। इसलिए आपको एक कदम आगे बढ़ाना चाहिए।

देवपूजन का शिक्षण

मित्रो! पाँच चीजें हैं, जो देवताओं के पूजन में लगानी पड़ती हैं। आखिर ये क्या हैं? बेटे ये इशारे हैं। किसके इशारे हैं? वे उसी के लिए हैं, जो अध्यात्म का मूल उद्देश्य है—'आत्मसंशोधन'। सारा का सारा अध्यात्म इसी पर खड़ा हुआ है। बेटे, इसीलिए मैं कहता हूँ कि हमको अपने आपकी सफाई करनी चाहिए। सचाई पैदा करने के लिए

परिश्रम करना चाहिए। यही श्रद्धा है। देवपूजन के लिए मैंने कितनी बार आपको बताया है, कितनी बार व्याख्याएँ की हैं। आपको मैंने हमेशा यही कहा है कि धूपबत्ती जलाने का मतलब अपने जीवन की सुगंध को फैला देना है, जिसे सूँघकर हर आदमी को प्रसन्नता हो। गंदगी को सूँघकर नाक फड़फड़ाती है और व्यक्ति कहता है कि अरे साहब! कहाँ से बदबू आ रही है। दूसरी ओर खुशबू को सूँघकर मन प्रसन्न हो जाता है और कहता है कि यहाँ तो बड़ी अच्छी खुशबू आ रही है। यह तो जबाकुसुम सी मालूम पड़ती है।

देवपूजन में हम धूपबत्ती जलाते हैं, जिसका मतलब है कि हमारा जीवन और हमारा व्यक्तित्व ऐसा हो जिसकी सुगंध, जिसकी खुशबू जहाँ कहीं भी जाए, वहाँ हर आदमी की तबियत खिल पड़े, प्रसन्न हो जाए। अच्छा मान लीजिए, यहाँ आप मोहनलाल का जिक्र कर रहे हैं। हाँ साहब! क्या कहना उनके व्यक्तित्व का। बेचारे संत थे। जब हम

उनकी दुकान पर गए, तो उन्होंने कहा कि जो चाहिए शांतिपूर्वक ले जाइए। पैसे भी आपके जमा हैं। आप सारे बाजार में घूम आइए. अगर कोई माल हमारे माल से एक पैसे कम में भी मिलता हो तो आप उस चीज को ले जाना। हमारे यहाँ बेईमानी का कोई चक्कर नहीं है। खराब माल दिखाई पड़े, तो आप घर से वापस ले आना, हम आपको ठीक चीज देंगे और सही कीमत पर देंगे। साहब! मोहनलाल ऐसे व्यक्ति थे। उनका बोलना, बातचीत करना, व्यवहार क्या शानदार था कि उसके क्या कहने? उसने इस तरह देखा। उसने उससे प्रशंसा की और उसने उससे। इस तरह उनकी खुशबू फैलती गई। इसे कहते हैं व्यक्तित्व की खुशबू।

मित्रो! धूपबत्ती का मतलब यह नहीं है कि आप एक लकड़ी को जला दें और सुगंध फैला दें। उस धूपबत्ती से देवता प्रसन्न नहीं हो सकते। उससे आपके कमरे की सफाई हो सकती है। इससे आपका कमरा जरूर खुशबूदार हो जाएगा, लेकिन आपकी

धूपबत्ती भगवान तक नहीं पहुँच सकती, क्योंकि भगवान बहुत दूर रहते हैं। भगवान जहाँ रहते हैं, वहाँ आपकी अगरबत्ती का धुआँ कैसे पहुँच सकता है? वहाँ तो केवल आपकी जिंदगी की महक ही पहुँच सकती है।

इसी तरह दीपक जलाने का मतलब मैंने कई बार आपको बताया है। कई बार तो मैं इसका मखौल उड़ाने लगता हूँ और कहने लगता हूँ कि भगवान की आँखों में लाइट अभी ठीक है। सभी कुछ दिखाई पड़ता है। सूरज-चाँद निकलते रहते हैं। मैं उन लोगों का मजाक उड़ाता हूँ, जो यह ख्याल करते हैं कि केवल दीपक जलाने से भगवान को प्रसन्न कर सकते हैं। कई लोग मुझसे बहस करने लगते हैं और कहते हैं कि गुरुजी! किसका दीपक जलाएँ? कोई कहता है कि हमारे यहाँ गाय का घी है, तो कोई कहता है कि भैंस का घी है। मैं उनसे यही कहता हूँ कि गाय का है तो उसे ही जला लिया करें। भैंस का है तो उसे जला लें। वे कहते हैं

कि अभी तो आप गाय का कह रहे थे। बेटा मैं क्या कह रहा हूँ, बात तो कुछ समझता नहीं है, केवल 'गाय का घी' या 'भैंस का घी' के झगड़े में पड़ा है। असलियत को समझना नहीं चाहता।

काया का दीपक व भावना का घी

मित्रो! काया को दीपक और भावना को घी कहते हैं तथा श्रम को बत्ती कहते हैं और उसके भीतर जो प्रकाश काम कर रहा है, वह अंतरात्मा का है। हमारी अंतरात्मा की ज्योति दीपक में जला करती है और हमारे श्रम की वर्तिका उसमें लगी रहती है और प्यार उसमें भरा रहता है। पात्रता का दीपक, जो मिट्टी का शकोरा होता है, उसे पात्र कहते हैं। हमारे जीवन में पात्रता एक, जीवन स्नेह से भरा हो दो, श्रम-लगनशीलता की वर्तिका उसमें जलती हो तीन और उसके अंदर भगवान का प्रकाश चमक रहा हो चार। अगर इन चारों से युक्त हमारा व्यक्तित्व है, तो वह भगवान के चरणों पर रखने योग्य है। ऐसा व्यक्तित्व भगवान को प्रकाश दे सकता है और अपने

आपको प्रकाश दे सकता है। हमने कितनी बार कहा है कि आप दीप यज्ञ करें। जीवन दीपक का प्रतीक है। अच्छा साहब! दीपक प्रतीक है तो दीपक जलाऊँगा और भगवान को पकड़कर लाऊँगा। बेटे, दीपक से कैसे पकड़ सकता है तू भगवान को, बता तो सही? दीपक का मकसद, धूपबत्ती का मकसद समझिए, तब भगवान को पकड़ने का प्रयास कीजिए।

स्नान अर्थात पसीना परहित के लिए

देवपूजन में पानी क्यों चढ़ाते हैं? महाराज जी! हम तो एक चम्मच जल छोड़ देते हैं और कहते हैं—'**स्नानं समर्पयामि।**' अच्छा तो बता बेटे, तूने भगवान जी को एक चम्मच जल से कैसे स्नान करा दिया। तू अपनी स्त्री को क्या एक चम्मच जल से स्नान करा सकता है, फिर गायत्री माता तो बड़ी हैं, उन्हें कैसे करा देगा स्नान? महाराज जी! '**स्नानं समर्पयामि**' कहकर। बेटे! तू असली मकसद को समझता नहीं है, केवल पानी, चम्मच आदि के चक्कर में ही घूम रहा है। अरे उससे आगे बढ़ और

स्नान का मतलब समझ। स्नान का अर्थ यह है कि हम अपने पसीने की बूँदें, श्रम की संपत्ति लोकमंगल के लिए खरच करेंगे। अभी तो तेरा सारा पसीना अपने बेटे के लिए, पैसे के लिए खरच होता रहता है। तेरे पसीने की एक बूँद समाज के काम न आ सकी, श्रेष्ठ उद्देश्यों के लिए खरच न हो सकी। सारा का सारा समय, सारा का सारा श्रम और सारा का सारा स्वेदबिंदु पसीने की बूँदें हमारी हमारे ही काम में खरच हो गईं, भगवान के लिए खरच नहीं हुईं। हम कसम खाते हैं कि भगवान अब हम पसीने की बूँदें आपके लिए टपकाएँगे। पानी से, स्नानम् से यही मतलब है।

अक्षत अर्थात एक अंश भगवान का

अक्षत से क्या मतलब है? अक्षत से मतलब है, हमारी कमाई का एक हिस्सा भगवान के लिए, समाज के लिए लगना चाहिए। हम जो कुछ कमाते हैं, स्वयं के लिए नहीं खा जाएँगे। जो आप कमाता है और आप ही खाता रहता है, वह चोर है। जो

व्यक्ति समाज के सहयोग से कमाता है और स्वयं ही सब खाकर खत्म कर देता है, वह चोर है। भाईसाहब! आप अपनी कमाई का एक हिस्सा समाज के लिए दीजिए। आप गवर्नमेंट को टैक्स देते हैं, औरों को देते हैं, आप धर्म को भी टैक्स दीजिए, समाज को टैक्स दीजिए। सत्प्रवृत्तियों को टैक्स दीजिए, हिस्सा निकालिए। नहीं साहब! हम नहीं निकाल सकते। नहीं आपको निकालना पड़ेगा। यही है—'**अक्षतं समर्पयामि**'। संक्षेप में अक्षत का मतलब यह है कि हम अनाज कमाते हैं, पैसा कमाते हैं, वस्तुएँ कमाते हैं, उसका एक अंश भगवान के लिए अलग से निकालना पड़ेगा।

मित्रो! भगवान हमारी जिंदगी का पार्टनर है। उस पार्टनर का शेयर चुकाइए। नहीं साहब! उसका तो हम शेयर नहीं चुकाएँगे, हम ही अकेले खा जाएँगे। नहीं बेटे! वह हिस्सेदार है, वह दावा कर देगा तो तेरी अकल ठिकाने लगा देगा। पचास फीसदी का 'मैटर' और पचास फीसदी का 'अध्यात्म' है।

पचास फीसदी का प्राण और पचास फीसदी का शरीर। ये तेरे आधे का पार्टनर है। कौन? भगवान! अतः उसके लिए भी निकाल। अरे, महाराज जी! मैं तो थोड़ा सा ही निकालूँगा। कितना निकालेगा? बस '**अक्षतं समर्पयामि**' मैं तो सात चावल रोज निकालूँगा। नहीं बेटे, ऐसा नहीं हो सकता। पचास परसेंट का हकदार है भगवान, तो पच्चीस परसेंट, दस परसेंट कुछ तो दे। उसमें से पाँच परसेंट तो दे। एक परसेंट तो दे। नहीं साहब! मैं तो केवल '**अक्षतं समर्पयामि**' करूँगा। अहा...। अच्छा तो ये मामला है। इसीलिए तू अक्षत चढ़ा रहा था कि बाकी सारा माल स्वयं हजम कर ले। आपको पच्चीस हजार का जो फायदा हुआ, उसमें से लाइए पचास परसेंट। नहीं साहब! उसमें से पंद्रह पैसे लेना हो तो ले जाइए भावनापूर्वक, प्रेमपूर्वक, श्रद्धापूर्वक! अहहा....। बड़ा चालाक है तू।

इस तरह से मित्रो '**अक्षतं समर्पयामि**' का उद्देश्य समझिए। आप उद्देश्य नहीं समझेंगे, बस

चावल फैलाते रहेंगे तो इससे अच्छा है कि उस चावल को चिड़िया को खिला दें अन्यथा उस चावल को बाहर डालेंगे, झाड़ू से झाड़कर बाहर फेंक देंगे और वह बेकार हो जाएगा। अनाज और खराब हो जाएगा। अगर आप यह सब नहीं समझना चाहते, इसका उद्‌देश्य ग्रहण नहीं करना चाहते, उसकी प्रेरणा स्वीकार करना आपको मंजूर नहीं तो आप उस चावल को कहीं और लगा दीजिए। किसी चिड़िया को या किसी पक्षी के बच्चे को खिला दीजिए, फेंकिए मत। इन चावलों को फेंकने से क्या फायदा?

गुणों की सुगंधि

इसी तरह मित्रो! जब हम चंदन चढ़ाते हैं तो इसका मतलब होता है कि हम अपने व्यक्तित्व से अपने समीपवर्ती वातावरण में उसी तरह से सुगंध बिखेर दें जिस तरह से चंदन का दरख्त अपने आस-पास के छोटे-छोटे पौधों को अपने समान सुगंधित बनाता चला जाता है। आप जहाँ कहीं भी रहें और जो भी आपके संपर्क में आए, उसे श्रेष्ठ बनाइए।

दूसरों को अपनी अच्छाई का फायदा जरूर दीजिए। आप दूसरों को अच्छा जरूर बनाइए। नहीं साहब! हम तो अच्छे रहेंगे, किंतु किसी को अच्छा नहीं बनाएँगे? नहीं बेटे! औरों को भी अच्छा बनाना चाहिए जैसे कि चंदन बनाता है।

मित्रो! मैं आपको यही समझा रहा था कि आप इस खुशबू को फैलाइए। एक से दस के रूप में विस्तृत हो जाइए। आप चंदन के दरख्त की तरह हो जाइए और अपनी खुशबू को दूसरों में फैलने दीजिए। मैं आपसे यही कह रहा था कि सारी की सारी वस्तुओं का विकास देवपूजन के पीछे जुड़ा हुआ है। देवपूजन के सिद्धांत के पीछे समर्पण का भाव छिपा हुआ है, लेकिन यहाँ तो हमारा सारा जीवन राक्षस के लिए जुड़ा हुआ है। अभी तक हमने सारा जीवन असुर के लिए, पशु के लिए खरच किया है।

क्या होते हैं देवी-देवता

देवत्व का अर्थ होता है—श्रेष्ठताएँ। देवता कहाँ रहते हैं? हमें नहीं मालूम। हम एक बार

कैलाश पर्वत पर थे तो मरते-मरते बचे थे। देवता कहाँ रहते हैं? पीपल के पेड़ पर रहते होंगे। अच्छा तो चलिए दिखाइए। नहीं साहब! वहाँ तो देवी रहती है। कहाँ रहती है? महाराज जी! वह तो नगरकोट में रहती है, कलकत्ता (कोलकाता) में रहती है। अच्छा तो वहीं चलो। मैं तो कलकत्ता देख आया हूँ। वहाँ काली जीभ निकालकर चिढ़ा रही है। किसी स्टूडेंट ने पूछा था कि क्यों साहब! काली देवी जीभ निकालकर क्यों चिढ़ाती है? अरे भाई! जीभ निकालना उनका शौक है। महाराज जी! एक देवी नगरकोट में रहती हैं। मेरे बाल-बच्चों का मुंडन वहाँ होगा। अच्छा बेटे! तेरी कुलदेवी कहाँ रहती है। महाराज जी! बाड़मेर में, जैसलमेर में। तो वहाँ क्या करेगा? बच्चे का मुंडन कराऊँगा। और कहीं करा ले तो? नहीं महाराज जी! देवी नाराज हो जाती है। क्या कहती है तेरी देवी? यों कहती है कि मैं बाल खाऊँगी, तू बाल यहीं काट। बेटे तू ऐसा भी कर सकता है कि घर पर मुंडन करा ले और बाल

एक डिब्बे में बंद करके उसे देवी के पास पार्सल से भेज दे, देवी के काम आएगा। नहीं महाराज जी! देवी कहती है कि मुंडन के लिए हमारे यहाँ ही आना पड़ेगा, नहीं तो वह नाराज हो जाएगी।

साथियो! आपने देवी देखी है क्या? अगर देखी हो तो मुझे भी बता देना। मैंने तो देखी नहीं ऐसी देवी जो मुंडन कराती हो और बाल खाती हो। मैंने जो देवी देखी है, वह विचारणाओं के रूप में, भावनाओं के रूप में, सिद्धांतों के रूप में देखी है। मनोवृत्तियों के रूप में और कृतियों के रूप में देवियाँ देखी हैं। इनमें से एक का नाम दया की देवी, एक का नाम करुणा की देवी, एक का नाम श्रद्धा की देवी, एक का नाम दान की देवी है। मैंने असंख्य देवियों की पूजा की है और उनके साथ में इतना आनंद उठाया है कि वे मेरी सहेलियों की तरह, मित्रों की तरह मुझे हँसाती रहती हैं, मुझे खिलाती रहती हैं। देवियों के उद्यान में मैं विचरता रहता हूँ और देवियाँ मुझे प्यार देती रहती हैं। मरने के बाद

स्वर्ग में जिन देवियों और अप्सराओं का वर्णन किया गया है, उन देवियों और अप्सराओं को मैंने इसी वन में देखा है, प्रकृति के रूप में और प्रवृत्तियों के रूप में।

मित्रो! देवता कर्म हो सकता है, देवता विचार हो सकता है, देवता भावना हो सकता है, देवता व्यक्ति नहीं हो सकता। देवता अगर व्यक्ति होता तो दुनिया में छाया रहता, एक जगह नहीं रहता। शंकर जी शैवों में छाए रहते हैं। देवी शाक्तों में छाई रहती है और विष्णु भगवान वैष्णवों में छाए रहते हैं और रामचंद्र जी राम भक्तों में छाए रहते हैं, खुदाबंद करीम मुसलमानों में छाए रहते हैं। बेटे! इतने सारे भगवान नहीं हो सकते। सारी दुनिया में एक ही तरह का भगवान हो सकता है, अनेक तरह का कैसे हो सकता है? तो क्या अनेक तरह के भगवान नहीं हो सकते? बेटे! हमें विश्वास नहीं कि अनेक तरह के भगवान होते हैं। हमारा विश्वास इस बात के ऊपर है कि भगवान की जो असंख्य शक्तियाँ हैं, वे

मनुष्य के भीतर जब प्रवेश करती हैं तो वे देववृत्तियों के रूप में प्रवेश करती हैं।

देववृत्तियाँ जहाँ हैं, वहाँ हैं देवता

देववृत्तियाँ किसे कहते हैं? श्रेष्ठ चिंतन एक, श्रेष्ठ कर्म दो, श्रेष्ठ भावनाएँ तीन—इन्हीं का नाम देववृत्तियाँ हैं। वे श्रेष्ठताएँ जिनमें होंगी, उन्हें अगर मैं देवता कहूँ तो आप बुरा मत मानना। वास्तव में यही देवता हैं। बाहर के प्रतीकों के माध्यम से जनसाधारण को हम सिखाते हैं कि ये प्रतीक वास्तव में हमारे देवता हैं। प्रतीक हाँ बेटे प्रतीक। शंकर जी की जब हम पूजा करते हैं, तो हम कुछ प्रतीक के माध्यम से उन संवेदनाओं की, सिद्धांतों की, आदर्शों की पूजा करते हैं, जो शंकर जी में समाविष्ट हैं। जैसे कि शंकर जी के सिर में से ज्ञान की गंगा प्रवाहित होती है। शंकर जी के मस्तक पर संतुलन का चंद्रमा टिका हुआ है। जिन्होंने मुंडों की माला अर्थात मृत्यु को संगिनी बनाने के लिए अपने गले में मुंडों की माला पहनी हुई है। जिन्होंने साँपों को

गले से लगाकर रखा है। जिसका कि तीसरा नेत्र खुला हुआ है। तीसरा नेत्र कौन सा ? विवेक का नेत्र, ज्ञान का नेत्र, देवता का नेत्र, आज से लेकर हजारों वर्षों तक आगे और पीछे की अपनी परिस्थितियों को देख सकने वाला 'टेलिस्कोप' जिससे कि हम भविष्य देखते हैं। जिससे हम अपने बुढ़ापे को देखते हैं, जिससे अपनी मृत्यु को देखते हैं, जिससे हम परलोक को देखते हैं, जिससे हम जन्म-जन्मांतरों को देखते हैं, ऐसा हमारा टेलिस्कोप 'तृतीय नेत्र' खत्म हो गया है।

मित्रो! आज हमको अनीति दिखाई पड़ती है। साठ साल की उम्र में क्या कर रहा है? गुरुजी! हमारे तो साढ़े सात नंबर का चश्मा चढ़ गया है और वह खो गया है। तो अब आपको दिखाई नहीं पड़ता? हाँ गुरुजी! हमें दिखाई नहीं पड़ता। अच्छा तो अभी के फायदे के पीछे आप अपने भविष्य का सत्यानाश करने पर उतारू हैं। भविष्य को देखिए, बुढ़ापे को देखिए, परलोक को देखिए, मृत्यु को

देखिए और जन्म-जन्मांतर को देखिए। क्या आगे वाली चीजें नहीं देख सकते? नहीं साहब! हमको दिखाई नहीं पड़तीं। तो आप शंकर जी की भक्ति कीजिए और उनसे वरदान माँगिए कि आपने जो अपना विवेक का तीसरा नेत्र खोला हुआ था, वह हमारा भी खोल दीजिए।

मस्तिष्क का संतुलन किसे कहते हैं? जिसमें आदमी ऐसे भी और वैसे भी अर्थात दोनों परिस्थितियों में 'बैलेंस' कायम रख सकता है। साइकिल सवार को अपना 'बैलेंस' कायम रखना पड़ता है। बैलेंस गँवा देगा तो इधर गिरेगा या उधर गिरेगा और हाथ-पैर तुड़वा बैठेगा। अतः साइकिल चलाते समय बैलेंस बनाकर चलते हैं। किसी भी कार्य में अगर हम संतुलन कायम नहीं रख सकते, तो सफलता नहीं मिल सकती। यहाँ तक कि हम खुशी में भी संतुलन नहीं कायम रख पाते तो हम पागल हो जाते हैं और व्यसन तथा व्यभिचार की ओर मुड़ जाते हैं। जब हम गरीब होते हैं तो चोरी करने पर विवश हो जाते

हैं। हमारा 'बैलेंस' यों भी खराब हो जाता है और यों भी खराब हो जाता है।

मित्रो! 'बैलेंस' रखने वाली बत्ती का नाम है—मस्तिष्क। मस्तिष्क पर चंद्रमा होने का मतलब है—ज्ञान की गंगा, अमृत की धारा का प्रवाहित होना। ज्ञान की धाराएँ, अमृत की धाराएँ प्रवाहित होते रहने से मतलब है, हमारा मस्तिष्क स्वयं ज्ञान से भरा रहे और अपने श्रेष्ठ विचारों से सारे समाज में ज्ञान की गंगा बहाते चलें।

शंकर भगवान भूत-प्रेतों के साथ प्रेम करने वाले हैं। भूत-प्रेतों के हाल सुधारने के लिए खड़े होने वाले, पापी एवं पतित लोगों को सहारा देने वाले, ऊँचा उठाने वाले ही सच्चे अर्थों में शिवभक्त कहे जा सकते हैं। बाबा आम्टे की तरह से जिन्होंने कोढ़ियों का विद्यालय शुरू किया और अब वहाँ नागपुर के पास उनका विश्वविद्यालय भी बन चुका है। अभी-अभी अखबार में छपा है, उनकी फोटो भी छपी है, जिसकी कटिंग भी मैंने रखी है।

टी० वी० पर भी देखा है। उन्होंने सारी जिंदगी पीड़ितों के लिए, पतितों के लिए, कोढ़ियों के लिए खरच कर दी। अंधों के लिए, गूँगों के लिए, बहरों के लिए उन्होंने एक आश्रम बनाया, जहाँ उनका प्रशिक्षण होता है और उनमें से समाजसेवी निकलकर बाहर आते हैं। ऐसा है उनका विश्वविद्यालय। ये हमारी वो वृत्ति है, जिसका ज्ञान की गंगा के रूप में प्रवाहित होना स्वभाव है। ये वृत्तियाँ देववृत्तियों के रूप में, देवताओं के रूप में हमारे भीतर विद्यमान हैं। उन्हें विकसित करने के लिए, उभारने के लिए ही देवपूजन की पंचोपचार प्रक्रिया अपनाई जाती है। आज की बात समाप्त।

॥ ॐ शांतिः ॥

❐

देवपूजा का तत्त्वज्ञान

भारतीय संस्कृति देवपूजा में विश्वास करती है। 'देव' शब्द का स्थूल अर्थ है—'देने वाला', ज्ञानी, विद्वान आदि श्रेष्ठ व्यक्ति। देवता हमसे दूर नहीं हैं, वरन पास ही हैं। हिंदू धर्मग्रंथों में जिन तैंतीस करोड़ देवताओं का वर्णन किया गया है, वे वास्तव में देव-शक्तियाँ हैं। ये ही गुप्त रूप से संसार में नाना प्रकार के परिवर्तन, उपद्रव, उत्कर्ष उत्पन्न करती रहती हैं।

हमारे यहाँ कहा गया है कि देवता ३३ प्रकार के हैं, पितर आठ प्रकार के हैं, असुर ९९ प्रकार के, गंधर्व २७ प्रकार के, पवन ४६ प्रकार के बताए गए हैं। इन भिन्न-भिन्न शक्तिओं को देखने से विदित होता है कि भारतवासियों को सूक्ष्म विज्ञान की कितनी अच्छी जानकारी थी और वे उनसे लाभ उठाकर प्रकृति के स्वामी बने हुए थे। कहा जाता है कि

रावण के यहाँ देवता कैद रहते थे, उसने देवों को जीत लिया था।

हिंदुओं के जो इतने अधिक देवता हैं, उनसे यह स्पष्ट होता है कि उन्होंने मानवता के चरम विकास में असंख्य दैवी गुणों के विकास पर गंभीरता से विचार किया था। प्रत्येक देवता एक गुण का ही मूर्त रूप है। देवपूजा एक प्रकार से सद्गुणों, उत्तम सामर्थ्यों और उन्नति के गुप्त तत्त्वों की पूजा है। जीवन में धारण करने योग्य उत्तमोत्तम सद्गुणों को देवता का रूप देकर समाज का ध्यान उनकी ओर आकृष्ट किया गया। गुणों को मूर्त स्वरूप प्रदान कर भिन्न-भिन्न देवताओं का निर्माण हुआ है। इस सरल प्रतीक पद्धति से जनता को अपने जीवन को ऊँचाई की ओर ले जाने का अच्छा अवसर प्राप्त हुआ।

आप चाहे जिस हिंदू देवी-देवता की पूजा-आराधना करें, वह उसी जगत नियंता की एक शक्ति का रूप है। यह देवत्व का एक पहलू है जो आपके

व्यक्तित्व में विकसित होकर आपको सामर्थ्यवान बना सकता है।

आरोग्यं भास्करादिच्छेत्
घनामिच्छेदधुताशनात् ।
ज्ञान च शंकरादिच्छेत्
मुक्तिमिच्छेत जनार्दनात् ॥

आरोग्य की कामना सूर्यनारायण से करें, धन की इच्छा हुताशन (अग्निहोत्र) से पूरी करें। ज्ञान के लिए शंकर जी की आराधना करें और मुक्ति के लिए जनार्दन का आश्रय ग्रहण करें।

इस श्लोक का स्थूल अर्थ तो यही है कि अमुक-अमुक अभिलाषा के लिए अमुक-अमुक देवता की पूजा, आराधना, चिंतन इत्यादि करें। पूजा-अर्चा का साधारण अर्थ हम लोग गंध, अक्षत, धूप, दीप, पुष्प, नैवेद्य, तांबूल, अर्घ, स्तोत्र, नमस्कार आदि ही समझते हैं और इतना कर्मकांड कर लेने मात्र से यह आशा करते हैं कि देवता लोग प्रसन्न होकर हमें मनोवांछित वस्तुएँ प्रदान कर देंगे। परंतु हम देखते हैं

कि अनेक मनुष्य इस प्रकार की ऊपरी पूजा-अर्चाओं में बहुत समय तक लगे रहते हैं, तो भी उनकी इच्छाएँ पूर्ण नहीं होती हैं। ऐसी दशा में उपर्युक्त शास्त्रवचन की सत्यता पर संदेह सा होने लगता है।

गंभीर दृष्टि से देखा जाए, तो इस वचन में संदेह की कोई गुंजाइश नहीं है। असफलता का कारण हमारा एकांगी दृष्टिकोण है।

हम समझते हैं कि हिंदू देवताओं को प्रसन्न करने के लिए धार्मिक कर्मकांड की पूजा-पत्री ही पर्याप्त है, पर वास्तविक बात ऐसी नहीं है, हिंदू देवी-देवताओं का वास्तविक रूप समझना चाहिए। प्रत्येक देवी-देवता का एक व्यावहारिक रूप है, जो हमारे दैनिक जीवन में कर्म पर निर्भर है। ये देवता हमसे यह माँग करते हैं कि हम उन्हें प्रसन्न करने के लिए इस जगत में ठोस कर्म करें, उनके द्वारा दिखाई हुई दिशा में परिश्रम करें, अपने उद्देश्य में तन्मय हो जाएँ, संक्षेप में अपने मन, वचन से इनमें अपने को नियोजित कर दें, तभी सच्ची पूजा संभव हो सकती

है। कर्म से प्रसन्न होकर ही ये देवता मनोवांछित फल दिया करते हैं। ये कार्य शक्तियों के प्रतीक हैं। जब हम किसी मनोवांछित देवता को चुनें तो हमें उसके व्यावहारिक मनोरूप को अवश्य समझ लेना चाहिए।

उदाहरण के लिए सूर्य देवता से हम आरोग्य, बल, स्वास्थ्य, दीर्घ जीवन की कामना करें। इसका व्यावहारिक अर्थ यह है कि हम सूर्य की किरणों, प्रकाश, वायु, खुला जीवन से घनिष्ठता रखें। शरीर को प्रकृति के सहयोग में आने दें। प्राकृतिक जीवन जिएँ। बदन को कपड़ों से ऐसा म लपेट लें कि त्वचा तक प्रकाश और वायु ही न पहुँच सके। सूर्य को 'नारायण' विशेषण दिया गया है, जिसका गुप्त तात्पर्य यह है कि उसकी किरणों में जीवनदायी शक्तियाँ हैं। ये रोग के कीटाणुओं को मारने की प्रचंड शक्ति रखती हैं, जितनी किसी बहुमूल्य दवाई में भी नहीं मिल सकती। जो व्यक्ति प्रकृति से निकट संपर्क रखते हैं और खुली धूप, वायु, प्रकाश आदि में कार्य

करते हैं, वे दीर्घजीवी और नीरोग रहते हैं। कहा भी है—"जहाँ धूप और हवा नहीं पहुँचती, वहीं डॉक्टर पहुँचते हैं।" प्रकृति के फल-फूल, जीवों को देखिए। फल, वनस्पति, वृक्ष आदि का जो भाग धूप से सीधा संबंध रखता है, वहाँ प्राणशक्ति अधिक पाई जाती है। फलों के, शाक-भाजियों के, अन्नों के छिलके सूर्य-किरणों के सीधे संपर्क में आते हैं। इसलिए भीतरी भाग की अपेक्षा उनके छिलकों में पोषक तत्त्व (विटामिन) अधिक पाए जाते हैं। सूर्य-स्नान, सूर्य किरण चिकित्सा, सूर्य-नमस्कार, सूर्य-सेवन, सूर्य उपासना, सूर्य-माहात्म्य आदि सभी का चिकित्सा पद्धतियों और वैद्यक में बड़ा महत्त्व माना गया है। कहने का तात्पर्य यह है कि सूर्य के इन असंख्य लाभों को देखकर ही हिंदू तत्त्वज्ञानियों ने सूर्य को 'नारायण' का दिव्य विशेषण प्रदान किया है। सूर्य शक्ति को जीवन में अधिक से अधिक व्यवहार करना यही सूर्य-पूजा है, जिससे आरोग्य की वृद्धि होती है।

हुताशन–अग्निहोत्र का वास्तविक अर्थ है—'साहसपूर्ण त्याग'। अग्निहोत्र में पहले हम अपनी मूल्यवान हवन–सामग्री श्रद्धापूर्वक हवन करते हैं, तब उस यज्ञ का फल मिलता है। जो व्यक्ति कठिन श्रम, जिम्मेदारी, ईमानदारी तथा जोखिम उठाने के लिए तैयार रहते हैं, वे ही धन कमा पाते हैं। भाग्य के भरोसे बैठे रहने वाले, आलसी, साहसहीन व्यक्ति कोई ऊँचा काम नहीं कर सकते और न धन कमा सकते हैं। किसान अपना अन्न खेत में बिखेर देता है, धैर्यपूर्वक छह महीने खेत को अपने पसीने से सींचता रहता है, एक बीज के बदले सौ बीज उसे मिलते हैं। साहसी पुरुषों के गले में लक्ष्मी की जयमाला पड़ते देखी जाती है। धैर्यवान, अग्नि तप सा कठोर परिश्रम करने वाले, अपने कारोबार पर एकाग्रचित्त से श्रद्धा रखने वाले लोग सफलता प्राप्त करते हैं। यही अग्नि–पूजा का वास्तविक व्यावहारिक स्वरूप है। जो व्यक्ति अग्निदेवता की पूजा का विधान समझता है, उसे अग्नि जैसा कठोर तप करना चाहिए।

ज्ञान के लिए शंकर भगवान की आराधना का विधान है। शिवशंकर संयमी, निस्पृह, त्यागी, योगस्थित (एकाग्रचित्त), उदारमना हैं। शंकर जी के इन गुणों को अपने चरित्र तथा दैनिक कार्यों में प्रकट करने वाले व्यक्ति ही सच्चे अर्थों में ज्ञानवान बनते हैं। उन्हें तत्त्वदर्शन प्राप्त होता है। असंयमी, ममताग्रस्त, लोभी, डाँवाडोल चित्त वाले, अनुदार वृत्तियों वाले लोग शिक्षा की उत्तम व्यवस्था होने पर भी अधूरा और उलटा ज्ञान ही प्राप्त करते हैं। वह ज्ञान नहीं, एक प्रकार का अज्ञान है, जिससे उनमें असत्य, छल, अपहरण, शोषण, अहंकार, असंयम जैसे दुर्गुणों की वृद्धि होती है। जिनमें शंकर तत्त्व की स्थिति मौजूद है, वे कोई गुरु न होते हुए भी एकलव्य की तरह मिट्टी की मूर्ति को गुरु बना लेते हैं, कबीर की तरह गुरु की बिना जानकारी में ही दीक्षा ले लेते हैं। दत्तात्रेय की तरह मकड़ी, मक्खी, कौवे, कुत्ते जैसे निम्न कोटि के जीवों को गुरु बनाकर उनसे अपना ज्ञान-भंडार भर लेते हैं। ज्ञानप्राप्ति के लिए

अपने अंदर शंकर-तत्त्व की स्थापना आवश्यक है। इसका यही व्यावहारिक रूप है।

मुक्ति के लिए जनार्दन की पूजा की जाती है। जनता-जनार्दन की पूजा को, लोकसेवा को, अनेक तत्त्वदर्शियों ने मुक्ति का साधन माना है। प्राणिमात्र में समाए हुए सजीव भगवान की पूजा करना कितने ही महर्षियों ने निर्जीव प्रतिमा पूजा की अपेक्षा कहीं ऊँचा माना है। इस प्रकार लोकसेवा, ईश्वर-पूजा ही ठहरती है, उससे मुक्ति का द्वार खुल जाता है।

हिंदू देव-पूजा प्रत्यक्ष फलदायी साधना है। हिंदू अपने चारों ओर प्रत्येक जीव, वृक्ष, पशु, मनुष्य सबमें भगवान को ही व्यापक देखता है। संसार के सब प्राणियों और अपने आस-पास के मनुष्यों को जनार्दनमय समझता है। ऐसा व्यक्ति गुप्त या प्रकट रूप से किसी के प्रति कोई बुराई नहीं कर सकता। ऐसा सात्त्विक आचार और विचार वाला व्यक्ति अपने सतोगुण के कारण दूसरों को मुक्त करता और स्वयं जीवनमुक्त हो जाता है।

हमारी देवपूजा में इसी प्रकार के गुप्त अभिप्राय कूट-कूटकर भरे हुए हैं। ये हमारे अंदर छिपे हुए पौरुष एवं पराक्रम को जाग्रत करने के प्रतीक हैं। ये गुणों की स्थूल प्रतिमाएँ हैं। आज अज्ञानवश हिंदू अपनी इन छिपी हुई शक्तियों को भूल गए हैं, अन्यथा इनमें ज्ञान, अध्यात्म, धर्म, विवेक, रसायन का अतुलित ज्ञान भंडार भरा हुआ है।

❐

मुद्रक—युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा (उ. प्र.)